॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

भावना उपनिषद

विषय सूची

॥अथ भावनोपनिषत् ॥ 3

भावना उपनिषद 5

शान्तिपाठ 13

॥ श्री हरि ॥

॥अथ भावनोपनिषत् ॥

॥ हरिः ॐ ॥

स्वाविद्यापदतत्कार्यं श्रीचक्रोपरि भासुरम् ।
बिन्दुरूपशिवाकारं रामचन्द्रपदं भजे ॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥

गुरुके यहाँ अध्ययन करने वाले शिष्य अपने गुरु, सहपाठी तथा मानवमात्र का कल्याण-चिन्तन करते हुए देवताओं से प्रार्थना करते है कि:

हे देवगण ! हम भगवान का आराधन करते हुए कानों से कल्याणमय वचन सुनें। नेत्रों से कल्याण ही देखें। सुदृढः अंगों एवं शरीर से भगवान की स्तुति करते हुए हमलोग; जो आयु आराध्य देव परमात्मा के काम आ सके, उसका उपभोग करें।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

जिनका सुयश सभी ओर फैला हुआ है, वह इन्द्रदेव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान रखने वाले पूषा हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, हमारे जीवन से अरिष्टों को मिटाने के लिए चक्र सदृश्य, शक्तिशाली गरुड़देव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें तथा बुद्धि के स्वामी बृहस्पति भी हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ हरिः ॐ ॥

॥ श्री हरि ॥

॥ भावनोपनिषत् ॥

(श्रीचक्रोपनिषत्)

भावना उपनिषद

आत्मानमखण्डमण्डलाकारमवृत्य सकलब्रह्माण्डमण्डलं स्वप्रकाशं ध्यायेत् । ॐ श्रीगुरुः सर्वकारणभूता शक्तिः । ॥१॥

परम पूज्य श्री सद्गुरु ही सर्वप्रधान परम कारणभूत शक्ति हैं॥१॥

तेन नवरन्ध्ररूपो देहः । नवशक्तिरूपं श्रीचक्रम् । वाराही पितृरूपा । कुरुकुल्ला बलिदेवता माता । पुरुषार्थाः सागराः । देहो नवरत्नद्वीपः । त्वगादिसप्तधातुभिरनेकैः संयुक्ताः सङ्कल्पाः कल्पतरवः । तेजः कल्पकोद्यानम् । रसनया भाव्यमाना मधुराम्लतिक्तकटुकषायलवणभेदाः षड्रसाः षड्तवः क्रियाशक्तिः पीठम् । कुण्डलिनी ज्ञानशक्तिर्गृहम् । इच्छाशक्तिर्महात्रिपुरसुन्दरी । ज्ञाता होता ज्ञानमग्निः (ज्ञानमर्घ्यम्) ज्ञेयं हविः । ज्ञातृज्ञानज्ञेयानामभेदभावनं श्रीचक्रपूजनम् । नियतिसहिताः शृङ्गारादयो नव रसा अणिमादयः । कामक्रोधलोभमोहमदमात्सर्यपुण्यपापमया

ब्राह्म्याद्यष्टशक्तयः । (आधरनवकम् मुद्राशक्तयः ।)
पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशश्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणवाक्पाणिपादपायूपस्थ
मनोविकाराः षोडष शक्तयः ।
वचनादानगमनविसर्गानन्दहानोपेक्षा-
भुद्धयोऽनङ्गकुसुमादिशक्तयोऽष्टौ । अलम्बुसा
कुहूर्विश्वोदरी वरुणा हस्तिजिह्वा यशस्वत्यश्विनी गान्धारी
पूषा शङ्खिनी सरस्वतीडा पिङ्गला सुषुम्ना चेति चतुर्दश
नाड्यः । सर्वसंक्षोभिण्यादिचतुर्दशारगा देवताः ।
प्राणापानव्यानोदानसमाननागकूर्मकृकरदेवदत्तधनञ्जया इति
दश वायवः । सर्वसिद्धिप्रदा देव्यो बहिर्दशारगा देवताः ।
एतद्वायुदशकसंसर्गोपाधिभेधेन रेचकपूरकशोषकदाहप्लावका
प्राणमुख्यत्वेन पञ्चधोऽस्ति। क्षारको दारकः क्षोभको
मोहको जृम्भक इत्यपालनमुख्यत्वेन पञ्चविधोऽस्ति ।
तेन मनुष्याणां मोहको दाहको भक्ष्यभोज्यशोष्यलेह्यपेयात्मकं
चतुर्विधमन्नं पाचयति। एता दश वह्निकलाः सर्वज्ञत्वाद्यन्तर्दशारगा
देवताः । शीतोष्णसुखदुःखेच्छासत्त्वरजस्तमोगुणा
वशिन्यादिशक्तयोऽष्तौ । शब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः पञ्चतन्मात्राः
पञ्चपुष्पबाणा मन इक्षुधनुः । वश्यो वाणो रागः पाशः । द्वेषोऽङ्कुशः
। अव्यक्तमहत्तत्त्वमहदहङ्कार इति कामेश्वरी-वज्रेश्वरी-
भगमालिन्योऽन्तस्त्रिकोणाग्रगा देवताः । पञ्चदशतिथिरूपेण
कालस्य परिणामावलोकनस्थितिः पञ्चदशनित्याः । श्रद्धानुरूपा
धीर्देवता । तयोः कामेश्वरी सदानन्दघना परिपूर्णस्वात्मैक्यरूपा
देवता । ॥२॥

किस हेतु से शरीर में श्रीचक्रत्व सिद्ध होता है? नौ छिद्रों से युक्त यह देह है तथा (विमल से लेकर ईशान तक) नौ शक्तियों से सम्पन्न यह श्रीचक्र है। इस देह की माता कुरुकुल्ला बलि देवी एवं पिता के रूप

में वाराही हैं। देह के आश्रय रूप में धर्मादि चारों पुरुषार्थ ही इसके चार समुद्र के रूप में हैं। यह शरीर ही नवरत्न द्वीप है। इस द्वीप की आधारभूता शक्तियाँ (योनिमुद्रा आदि सर्वसंक्षोभिणी पर्यन्त) महात्रिपुरसुन्दरी आदि नौ हैं। त्वचा आदि सप्त धातुओं एवं अनेक अन्तः-बाह्य विकारों से युक्त नानाविध संकल्प-विकल्प ही कल्पवृक्ष है। (उस परमात्मा से भिन्न रमणीय नानाविध) तेजस् स्वरूप-सा जीव ही उद्यान है। जिह्वा द्वारा आस्वादित किये जाने वाला मधुर, अम्ल, तिक्त (तीखा), कड़वा, कषैला एवं नमकीन रस आदि छः ऋतुएँ हैं। क्रिया नामक जो शक्ति है, वही पीठ है। कुण्डलिनीरूपी ज्ञानशक्ति ही गृह है। इच्छाशक्ति ही महात्रिपुरसुन्दरी नामक आराध्या भगवती है। ज्ञाता ही होता (हवन करने वाला), ज्ञान ही अर्घ्य एवं ज्ञेय (ज्ञातव्य तत्त्व) ही हविरूप है। ज्ञाता, ज्ञान एवं ज्ञेय को भेदरहित मानना ही श्रीचक्र का पूजन है। अणिमादि सिद्धियों (अणिमा, लघिमा, महिमा, ईशित्व, वशित्व, प्राकाम्य, भुक्ति, इच्छा, प्राप्ति और सर्वकाम मुक्ति) का सम्बन्ध नियति (प्रकृति निर्धारण) सहित श्रृंगार, वीर, करुण आदि नौ-रसों से है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य, पुण्य एवं पाप से युक्त ब्राह्मी आदि आठशक्तियाँ हैं। पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, कर्ण, त्वचा, नेत्र, जिह्वा, नासिका, वाणी, हाथ, पैर, मल-मूत्रेन्द्रियाँ तथा मन आदि विकार ही (मूल प्रकृति से उत्पन्न) षोडश शक्तियाँ हैं। वचन (बोलना), आदान (ग्रहण करना), गमन (गतिशील होना), विसर्ग (त्याग करना), आनन्द, हान (त्याज्य), उपेक्षा-बुद्धि एवं अनङ्ग-कुसुम आदि आठ शक्तियाँ हैं। अलम्बुसा, कुहू, विश्वोदरी, वरुणा, हस्तिजिह्वा, यशस्विनी, अश्विनी, गान्धारी, पूषा, शंखिनी, सरस्वती, इड़ा, पिङ्गला, सुषुम्ना आदि चौदह नाड़ियाँ सर्वसंक्षोभिणी

आदि चतुर्दशार देवता हैं। प्राण, अपान, उदान, समान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त, धनञ्जय-ये दस प्राण सर्वसिद्धिप्रदा आदि देवियाँ बाह्य दशार देवता हैं। इन दस वायुओं के सम्पर्क एवं उपाधि भेद से रेचक, पूरक, शोषक, दाहक, प्लावक-ये अमृतस्वरूप प्राण मुख्यत: पाँच प्रकार के हैं। मानवों के मोहक एवं दाहक होते हुए चबाये जाने वाले, चाटे जाने वाले, चूसे जाने वाले तथा पिये जाने वाले इन चारों प्रकार के अन्नों को पचाते हैं। ये दस अग्नि की कलास्वरूप वायु ही सर्वज्ञत्व आदि अन्तः दशार देवता हैं। जाड़ा, गर्मी, सुख, दुःख, इच्छा, सत्त्व, रज, तम ही 'वशिनी' आदि आठ शक्तियाँ हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गन्ध आदि पञ्च तन्मात्राएँ ही पाँच पुष्पबाण हैं तथा मन ही ईख का बना हुआ धनुष है अर्थात् मन के द्वारा ये रूपादि पञ्चबाण बाहर फेंके जाते हैं। वश में होना ही बाण है, राग (प्रेम) ही पाश (बन्धन) है और द्वेष ही अंकुश है। अव्यक्त, महत्तत्त्व, अहंकार, कामेश्वरी, वज्रेश्वरी तथा भगमालिनी आदि आन्तरिक त्रिकोण के अग्रभाग में स्थित देवता हैं। पन्द्रह तिथियों के रूप से काल के परिणाम का अवलोकन करने वाले पन्द्रह नित्य श्रद्धानुरूप अधिदेवता हैं। उन (वज्रेश्वरी तथा भगमालिनी) में आद्याप्रधान कामेश्वरी जो कि सत्, चित्, आनन्दघन स्वरूपा हैं एवं परिपूर्ण (ब्रह्म) और आत्मा की ऐक्य रूपा देवता हैं॥२॥

सलिलमिति लौहित्यकारणं सत्त्वम् । कर्तव्यमकर्तव्यमिति भावनायुक्त उपचारः । अस्ति नास्तीति कर्तव्यतानूपचारः । बाह्याभ्यन्तःकरणानां रूपग्रहणयोग्यतास्त्वित्यावाहनम् ।

तस्य बाह्याभ्यन्तःकरणानामेकरूपविषयग्रहणमासनम् ।
रक्तशुक्लपदैकीकरणं पाद्यम् ।
उज्ज्वलदामोदानन्दासनदानमर्घ्यम्।
स्वच्छं स्वतःसिद्धमित्याचमनीयम् । चिच्चन्द्रमयीति
सर्वाङ्गस्रवणं स्नानम् । चिदग्निस्वरूपपरमानन्दशक्तिस्फुरणं
वस्त्रम् । प्रत्येकं सप्तविंशतिधा
भिन्नत्वेनेच्छाज्ञानक्रियात्मकब्रह्मग्रन्थिमद्रसतन्तुब्रह्मनाडी
ब्रह्मसूत्रम् । स्वव्यतिरिक्तवस्तुसङ्गरहितस्मरणां विभूषणम् ।
सच्चित्सुखपरिपूर्णतास्मरणं गन्धः । समस्तविषयाणां
मनसः स्थैर्येणानुसंधानं कुसुमम् । तेषामेव सर्वदा स्वीकरणं
धूपः । पवनावच्छिन्नोर्ध्वज्वलनसच्चिदुल्काकाशदेहो दीपः ।
समस्तयातायातवर्ज्यं नैवेद्यम् । अवस्थात्रयाणामेकीकरणं ताम्बूलम्।
मूलाधारादाब्रह्मरन्ध्रपर्यन्तं ब्रह्मरन्ध्रादामूलाधारपर्यन्तं
गतागतरूपेण प्रादक्षिण्यम् । तुर्यावस्था नमस्कारः ।
देहशून्यप्रमातृतानिमज्जनं बलिहरणम् । सत्यमस्ति
लर्तव्यमकर्तव्यमौदासीन्यनित्यात्मविलापनं होमः । स्वयं
तत्पादुकानिमज्जनं परिपूर्णध्यानम् । ॥३॥

सलिल अर्थात् गुरु-मन्त्रात्मक देवों का एकीकरण रूप सत् तत्त्व ही कर्तव्य है और एकीकरण रूप न करना ही अकर्तव्य है। भावना योग ही इसका उपचार (पूजा) है। अस्ति (ब्रह्म है) -नास्ति (ब्रह्म नहीं है) की कर्तव्यता (निरन्तर अनुसन्धान करना) उपचार है। बाह्य एवं आभ्यन्तर कारणों के रूप ग्रहण की योग्यता ही आवाहन है। उसका बाह्य एवं आभ्यन्तर करणों (इन्द्रियों) का एक रूप होकर विषयों का ग्रहण करना ही आसन है। रक्त एवं शुक्ल पद (सत एवं तम गुणों) का एकीकरण पाद्य है। उज्ज्वल (निर्मल) दामोदानन्द

(आनन्दमयब्रह्म) में सदैव अवस्थित रहने तथा इसी का दान (योग्य शिष्य को यह ज्ञान प्रदान करना) -अर्घ्य है। स्वयं स्वच्छ एवं स्वतः सिद्ध होना ही आचमन है। चिद्रूप चन्द्रमयी शक्ति से सम्पूर्ण अंगों का स्रवण (स्वेदयुक्त होना) ही स्नान है। चिद् अग्निस्वरूप परमात्मा की शक्ति का स्फुरण (प्रकाशित होना) ही वस्त्र है। (इच्छा-ज्ञान-क्रिया आदि तीन शक्तियों के त्रिगुणात्मक होने से) हर एक के जो सत्ताईस भेद एवं इच्छा, ज्ञान तथा क्रिया शक्ति स्वरूप ब्रह्म, (विष्णु एवं रुद्र) ग्रन्थि के मध्य स्थित सुषुम्ना नाड़ी ही ब्रह्मसूत्र है, (क्योंकि यही नाड़ी ब्रह्म की द्योतका है।) अपने से पृथक् वस्तु का स्मरण न करना ही आभूषण है। शुभ्र स्वरूप, जो ब्रह्म है, उससे भिन्न कुछ भी नहीं, यही स्मरण करना 'गन्ध' है। समस्त विषयों का मन की स्थिरता द्वारा अनुसन्धान करना ही पुष्प (फूल) है तथा उसे स्वीकार करना ही धूप है। पवनयुक्त योग के समय प्राण, अपान की एकता से सुषुम्ना में सत्-चित्, उल्कारूप जो (प्रकाशरूप) आकाश देह है, वही 'दीप' है। अपने से अलग समस्त विषयों में मन की गति का गमनागमन स्थिर हो जाना ही नैवेद्य है। तीनों अवस्थाओं (जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति) का एकीकरण ही ताम्बूल (पान) है। मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त एवं ब्रह्मरन्ध्र से मूलाधार तक बार-बार आना-जाना ही प्रदक्षिणा है। चतुर्थ अवस्था अर्थात् तुरीयावस्था में रहना ही 'नमस्कार' है। देह की जड़ता में डूबना अर्थात् आत्मा को चैतन्य युक्त मानकर एवं शरीर को जड़ मानकर स्थिर रहना ही 'बलि' है। अपना आत्मतत्त्व ही स्वयं सत्य रूप है, ऐसा निश्चय करके कर्तव्य, अकर्तव्य, उदासीनता, नित्यात्मक आत्मा में विलास करना अर्थात् निरन्तर आत्मचिन्तन करना ही यज्ञ (हवन) है तथा स्वयमेव उस परब्रह्म-विराट् पुरुष (परमात्मा) की

पादुकाओं में अनासक्त भाव से डूबे रहना ही परिपूर्ण ध्यान है। (सारांश यह हुआ कि जिस प्रकार पूजन के लिए धूप, दीप, नैवेद्य, प्रदक्षिणा एवं नमन-वन्दन आदि अपेक्षित होता है, वैसे ही परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति हेतु उपर्युक्त कहे गये पदार्थों का साधन कर लेना ही तद्-तद् धूप-दीप एवं नैवेद्य आदि हैं। इन्हीं मांगलिक पदार्थों को भावनापूर्वक समर्पित करने से ही उस ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाता है)॥३॥

एवं मुहूर्तत्रयं भावनापरो जीवन्मुक्तो भवति स एव शिवयोगीति गद्यते। आदिमतेनान्तश्चक्रभावनाः । तस्य देवतात्मैक्यसिद्धिः । चिन्तितकार्याण्ययत्नेन सिद्ध्यन्ति । स एव शिवयोगीति कथ्यते।॥४॥

इस तरह से जो भी मनुष्य (योगी-साधक) तीन मुहूर्त तक भावनापरायण रहता है, वह जीवन्मुक्त हो जाता है। वह एक मात्र ब्रह्म का ही रूप हो जाता है तथा उसके द्वारा चाहे हुए कार्य बिना यत्न के ही पूर्ण हो जाते हैं और वही (साधक) शिवयोगी कहलाता है॥४॥

कादिहादिमतोक्तेन भावना प्रतिपादिता । जीवन्मुक्तो भवति । य एवं वेद । इत्युपनिषत् ।

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

शान्तिपाठ

॥ हरिः ॐ ॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥

गुरुके यहाँ अध्ययन करने वाले शिष्य अपने गुरु, सहपाठी तथा मानवमात्र का कल्याण-चिन्तन करते हुए देवताओं से प्रार्थना करते है कि:

हे देवगण ! हम भगवान का आराधन करते हुए कानों से कल्याणमय वचन सुनें। नेत्रों से कल्याण ही देखें। सुदृढः अंगों एवं शरीर से भगवान की स्तुति करते हुए हमलोग; जो आयु आराध्य देव परमात्मा के काम आ सके, उसका उपभोग करें।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

जिनका सुयश सभी ओर फैला हुआ है, वह इन्द्रदेव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान रखने वाले पूषा हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, हमारे जीवन से अरिष्टों को मिटाने के लिए चक्र सदृश्य, शक्तिशाली गरुड़देव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि

करें तथा बुद्धि के स्वामी बृहस्पति भी हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ इति भावनोपनिषत् ॥

॥ भावना उपनिषद समात ॥

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय: ॥